(हंस में प्रकाशित)

कहानी अनुजा

पहली बार मैं उसे भारतीय मंदिर में मिली थी। इस मंदिर का निर्माण डेनमार्क में बसे भारतीयों के सहयोग से कुछ वर्षो पूर्व हुआ था। यह एक बड़ी उपलब्धि की बात थी कि एक छोटा समुदाय होने के बावजूद डेनमार्क में अब भारतीयों का अपना एक धार्मिक स्थल था। हर रविवार व प्रत्येक हिन्दू त्यौहारों के दिन वहॉ भजन कीर्तन होता व बाद में लंगर का आयोजन।

उस दिन कृष्ण जन्माष्टमी थी। लोगों की तादाद काफी बड़ी थी। भारत से एक भजन मंडली भी बुलाई हुई थी। उस भीड़ में जब मैंने उसे देखा तो नजरे उस पर हठात टिक गई। वह भी मुझे एकटक देखे जा रही थी। फिर वह मेरी तरफ बढ़ी। "क्या तुम यहॉं नई आयी हो?" उसने मुझसे पूछा। "मैंने पहले तुम्हें यहॉ कभी नहीं देखा।"

"हॉ सिर्फ दो ही महीने हुये है।"

हम दोनों असमंजस में एक-दूसरे को लगातार ताके जा रहे थे। वह मुझे जानी-पहचानी लग रही थी और शायद मैं उसे...।

"तुम इंडिया में कहॉ से हो?" उसने दूसरा प्रश्न किया।

"हैं तो हम हरिद्वार के मगर यहॉ आने से पहले दस साल मुंबई में रहे।"

"मैं भी तो हरिद्वार की हूँ," वह चहकते हुये बोली। "वहॉ तुम कहॉ पढ़ती थी?"

"वहीं जो वहॉ का लड़कियां का प्रचलित स्कूल है - महादेवी कन्या पाठशाला।"

"हाय... मैं भी तो वहीं की पढ़ी हूँ," कहते हुये उसकी उत्तेजना बढ़ गई। "दुनिया कितनी छोटी है ! किस साल तुमने वहॉ से हाई स्कूल पास किया? लगता है हम एक ही साथ पढ़ते थे।"

उसके चेहरा टटोलते हुये मैं बोली, "मुझे भी ऐसा ही लगता है। तुम कहीं अनुजा सिंह तो नहीं...?"

"अब मल्हौत्रा हूँ - अनुजा मल्हौत्रा।"

"और तुम सुधा देवली?"

"अब भट्ट बन गई हूँ - सुधा भट्ट।"

हम दोनों हंस पड़े। छठी से बीए तक हम साथ पढ़े थे। और नियति ने इतने वर्षो बाद हमें फिर मिला दिया था, लगभग सौलह वर्षो उपरांत। हम अब स्कूल या कालेज जाने वाली अल्हड़ छात्रायें नहीं रह गई थी। बल्कि शादीशुदा, दो-दो बच्चों की प्रौढ़ मातायें थी। उसके बच्चे, जो उसके साथ थे, हमें कौतुकता से निहार रहे थे। मेरे पति व बच्चे भी जिज्ञासा से हमारे बीच चलता वार्तालाप सुन रहे थे। "यहॉ कैसे आना हुआ?" उसने पूछा।

पंकज की तरफ इशारा करते हुये मैं बोली, "मेरे पति यहॉ डेनमार्क नेशनल लेबोरेटरी में रिसर्चर के पद पर नियुक्त हुये हैं।" ऑखों से प्रशंसा व्यक्त करते हुये उसने पंकज को नमस्कार किया। मेरे बच्चों के सिर पर भी प्यार से हाथ फेरा।

"तुम्हें यहॉ आये कितना समय हो गया?" यह मेरा प्रश्न था।

"ओह!" कहते हुये उसने एक गहरी सांस ली। "काफी समय हो गया। शादी के तुरन्त बाद ही यहॉ आ गई थी। मेरे दोनों बच्चे यहीं पैदा हुये।" उसके बच्चे मेरे बच्चों की तुलना में काफी छोटे लग रहें थे। सम्भवत: उसकी शादी देर से हुई हो।

"तुम्हारे पति?" इधर-उधर नजर दौड़ाते हुये मैंने पूछा। उसके पति उसके साथ नहीं थे। "वो यहॉ क्या करते हैं?"

मेरे प्रश्न ने उसे उलझन में डाल दिया। पल भर की खामोशी के बाद कुछ सोचते हुये बोली, "बिजनेस...। वो यहॉ बिजनेस करते हैं। बिजनेस के सिलसिले में ही जर्मनी गये हुये हैं आजकल।"

हमने एक दूसरे को फिर निहारा। अभी तक हम अपने आश्चर्य से उबरे नहीं थे। सोचा नहीं था कि जिन्दगी की डगर में अपने किसी पुराने साथी से यूं मुलाकात हो जायेगी। हम एक दूसरे के समूचे व्यक्तित्व का ऑखे फाड़े निरिक्षण करते रहे। वह काफी मोटी हो गई थी। बाल भी उसके काफी सफेद हो गये थे जिन्हें उसने मेंहदी से लाल बनाया हुआ था।

"तुम भी यहॉ कुछ करती हो?"

मेरे इस प्रश्न ने उसे सोच में फिर डाल दिया। कुछ देर बाद बोली, "हॉ। मैं भी यहॉ नौकरी करती हूॅ।" मुझे यह सुनकर अच्छा लगा। कर्मशील लोग मुझे हमेशा प्रभावित करते थे। मैं तुरन्त बोली, "मैं भी यहॉ नौकरी करना चाहती हूॅ। यहॉ आने से पहले मुंबई में मैं स्कूल अध्यापिका थी।"

"तुम्हें डेनिशआती है?" उसने तटस्थ भाव से पूछा।

"डेनिश भाषा इतनी जल्दी कैसे आयेगी? अभी हमें यहॉ आये दो महीने ही तो हुये है। लेकिन मैं जल्दी ही यह भाषा सीखूगीं ताकि यहॉ के समाज से एकीकरण होने में मुश्किल न हो।"

"तो पहले सीखो। बिना डेनिश सीखे तुम्हें यहॉ झाड़ू लगाने का काम भी नहीं मिलेगा," वह रूखे स्वर में बोली।

मुझे उसके लहजे पर थोड़ा आश्चर्य हुआ। यह वह कैसी बातें करने लगी है। खैर...।

"तुम हरिद्वार किस रफ्तार से जाती हो?" मैंने पूछा तो वह फिर एक लंबी सांस खींचते हुये बोली, "हाय हरिद्वार...। कितना बेकार हो गया। कितना गंदा। गंगाजी में तो अब नहाने का ही मन नहीं करता। उसके पानी को देखते हुये मेरे बच्चे कहते हैं - यक्क...।"

"तुम वहॉ के प्रदुषण को देखती हो लेकिन मैं वहॉ के विकास को देखती हूॅ," मैं उससे बोली। मुझे उसकी बातचीत का सलीका बिल्कुल भी पसन्द नहीं आ रहा था। लेकिन विदेश की धरती में अपने किसी पुराने परिचित से मिलने की प्रसन्नता थी। हमने आपस में फोन नंबरों का वितरण किया। यह वादा करके कि एक-दूसरे से संपर्क में बने रहेंगे, हमने विदा ली।

इन्सान जहॉ कहीं भी जाता है उसे साथी व मित्र चाहिये होते हैं। संस्कृति का भेद मनुष्यों के बीच इतना गहरा होता है कि वह कहीं भी चला जाये अपनी संस्कृति के लोगों की तरफ ही लपकता है। सो यहॉ आकर हम भारतीय समुदाय की तरफ ही उन्मुख हुये थे। दो महीनों के अन्तराल में काफी लोगों से हमने मित्रता स्थापित कर ली थी। मैंने उनसे अनायास ही अनुजा व उसके पति का जिक किया। किसी ने भी उनका नाम अच्छे भाव से नहीं सुना। इसका अनुमान हमें जल्दी ही लग गया कि अनुजा के पति नरेन्द्र मल्हौत्रा की छवि कोपनहेगन के भारतीय समुदाय के बीच अच्छी नहीं है। वह एक शिपिंग कंपनी में काम करता था। उसमें कुछ घौटाला करने से उसे दो साल की कैद हुई। इस घटना ने अनुजा के परिवार की सारी प्रतिष्ठा को ताक पर रख दिया। लोग उनसे दूरी रखने लगे। वह किसी साफ या उचित बिजनेस में भी संलग्न नहीं था। लोगों को गलत अवैधानिक तरिकों से डेनमार्क में व्यवस्थित करवाता था और उनसे धन ऐंठता था।

अनुजा से पहले नरेन्द्र मल्हौत्रा एक स्वीडिश महिला से विवाहित था। उसके साथ वह दस साल रहा व उससे उसके दो बच्चे भी हुये। लेकिन जैसा कि पश्चिमी देशों का हिसाब है, काफी कम युग्ल ही शादी की वचनबद्वता को जिन्दगी भर निभा पाते हैं, उस स्वीडिश महिला से उसका तलाक हो गया। अनुजा की किस्मत में नरेन्द्र मल्हौत्रा की दूसरी पत्नी बनना लिखा था।

एक नई व अच्छी जिन्दगी की चाहत में अनुजा हरिद्वार से डेनमार्क आई। मगर नदी के पार दिखने वाली घास हमेशा हरी नहीं होती। उसे परदेश में आकर पता चला कि उसकी जिन्दगी कितनी चुनौतियों से भरी है। नई भाषा, नये तौर-तरीके सीखने के अतिरिक्त उसे अपने पति की बेवफाई भी झेलनी थी। वह स्वीडिश महिला के आकर्षण में

अभी भी बँधा था। वह स्वीडिश महिला भी, जिसने खुद ही उसका परित्याग किया था, अब उसके पीछे पड़ी थी। अनुजा को बहुत परेशानी हुई अपने पति को उसकी पूर्व पत्नी के चुंगल से छुड़ाने में।

मुझे यह सब जानकर बेहद अफसोस हुआ। अनुजा के प्रति मैं एक करूणा से भर गई। जहॉ तक मुझे ध्यान आता था कि अनुजा क्लास की एक मैधावी छात्रा थी। पढ़ाई में अव्वल आने के अतिरिक्त वह वाद-विवाद प्रतियोगिता आदि में भी हिस्सा लेती थी। बास्केट बॉल की चेंपियन थी वह। हर हाल में वह एक अच्छी जिन्दगी जीने की हकदार थी। कुछ बातें तो उसके सन्दर्भ में लोगों द्वारा इतनी अजीबोगरीब बताई गई कि मैंने विश्वास हीं नहीं किया। सच इतना कड़ुवा नहीं होता। लोग नाहक ही बात को बढ़ा-चढ़ा कर बोलते हैं। अफवाह फैलाने की उनकी आदत होती है। मैं मन ही मन बोली। बहरहाल मैं अनुजा से दुबारा कोई संपर्क नहीं कर सकी।

मंदिर में हमारी मुलाकात के करीब एक माह उपरांत अनुजा ने ही मुझे फोन किया अपने घर भोजन का निमन्त्रण देने के लिये। मेरे लिये धर्मसंकट की बात खड़ी हो गई। अनुजा मेरे शहर की ही नहीं थी, वह मेरी सहपाठी भी थी, वह भी कई सालों तक। बचपन से साथ पढ़ते हुये हम दोनों जवान एक साथ ही तो हुये थे। इतने अन्तरंग व्यक्ति का निमन्त्रण मैं कैसे ठुकरा सकती थी। साथ ही उससे दौस्ती बढ़ाने में भी हिचकिचाहट थी। "मैं पंकज से पूछ कर तुम्हें बताती हूँ," मैं असमंजसता में उससे बोल गई।

पंकज ने स्पष्ट इंकार कर दिया। "जिन लोगों के विषय में हमने इतना कुछ अनाप-शनाप सुन लिया है उनके साथ मैं कोई संबध नहीं रखना चाहता।"

मैं भी पंकज से पूर्णतया सहमत थी। अत: पति पर कोई जोर-जबरदस्ती डालने की चेष्टा नहीं की। मैंने अनुजा को फोन किया, "अनुजा ऐसा है। अभी पंकज ऑफिस के काम में बहुत व्यस्त हैं। सॉरी। अभी फिलहाल हम तुम्हारे घर नहीं आ सकते। फिर कभी सही...। आई एम सॉरी, हॉ...।"

अनुजा मेरी अनिच्छा को तुरन्त भांप गई। उसने दुबारा मुझे फिर कभी फोन नहीं किया।

समय गुजर रहा था। दिन महीनों में व महीने वर्षो में बीत रहे थे। हमें डेनमार्क आये दो साल हो गये थे। वहॉ रहने वाले कई भारतीय परिवारों से हमारा संपर्क हुआ, मित्रता हुई। लेकिन अनुजा के परिवार से हमारी कोई आत्मीयता नहीं पनपी। कभी-कभार वह मुझे इधर-उधर भारतीय जल्सों में दिख जाती। एक-दूसरे को देख कर मुस्कान भी हमारे चेहरों पर बड़ी मुश्किल सी खिंचती। वह मुझसे नाराज थी, इसलिये वह मुझे नजरान्दाज करती। और मैं उससे कोई दौस्ती ही नहीं करना चाहती थी। उसके पति को दो-तीन अवसरों पर मैंने उसके साथ देखा। उससे हमारा कोई परिचय नहीं हुआ। बस दूर से मैंने उसे अजनबियों की तरह देखा। अनुजा उसकी दूसरी पत्नी थी। लिहाजा वह उम्र में उससे काफी बड़ा प्रतीत हुआ।

उस दिन मेरे घर पार्टी थी। अपने भारतीय समुदाय के कुछ लोगों को अपने घर मैंने डिनर पर आमंत्रित किया था। यहॉ लोगों से मिलने का यही तरीका था। लोग औपचारिक निमन्त्रण में ही एक-दूसरे के घर जाते थे। अतिथियों के आने पर पहले उन्हें स्नैक्स व ड्रिंक्स परसे गये। लोग खा-पी रहे थे कि किसी ने अकस्मात कहा, "मल्हौत्रा का कल कार एक्सीडैंट हो गया। उसकी डैथ हो गई।"

खबर ने मुझे दहला दिया।

"उसके साथ एक डेनिश भी था। वह भी मर गया।"

"क्या वह पीये हुआ था?"

"वह तो हर समय ही पीये रहता था।"

"यह मल्हौत्रा... मर गया मगर सुधरा नहीं।"

मेरे व अनुजा के बीच की अन्तरंगता से बेखबर लोग उनके विषय में बतिया रहे थे। और मैं गुमसुम बनी अनुजा के विषय में निरन्तर सोचे जा रही थी। वह मेरी ही तो उमर की, मुश्किल से छत्तीस, सेंतीस की... और

विधवा हो गई। बच्चे भी तो उसके अभी कितने छौटे है। अचानक मेरा मन उससे मिलने को छटपटाने लगा। लेकिन मेरा घर अतिथियों से भरा था। मैंने ही उन्हें अपने घर खाने पर बुलाया था। उन्हें छोड़ कर मैं अनुजा के घर कैसे भाग जाती। किसी तरह मैंने पार्टी निपटने का इंतजार किया। जैसे ही आखिरी अतिथि ने विदा ली मैं फोन की तरफ लपकी। जल्दी से टेलीफोन डायरी के पन्ने पलट कर अनुजा का नंबर देखा व उसे फोन मिलाया।

किसी महिला का अपरिचित स्वर था, "हैलो!"

"मैं अनुजा से बात कर सकती हूँ?"

"आप कौन?" महिला ने मुझसे पूछा।

"मैं सुधा भट्ट हूँ। अनुजा की स्कूल के दिनों की सहेली।"

"होल्ड ऑन," कह कर महिला किसी से बात करने लगी। मैं स्पष्ट सुन रही थी कि वह अनुजा से बात कर रही थी। उसे वह मेरा परिचय दे रही थी। अनुजा का रूदन बढ़ गया था। फोन पर उसकी सिसकियों की आवाज मझे स्पष्ट सुनाई पड़ रही थी।

वह महिला मुझसे बोली, "वह आपसे बात करने की स्थिति में नहीं है।"

"मैं समझ सकती हूँ। क्या आप मुझे घर का पता दे सकती हैं। मैं अनुजा से मिलना चाहती हूँ। अभी, तुरन्त।"

"एक सौ सात रोविन्सोगेड, फर्स्ट फलोर - राइट।" मैंने जल्दी से एक पर्ची पर उसके घर का पता नोट किया।

पंकज मेरी हरकतों को खामोश ताक रहे थे। मैं उनसे बोली, "चलो अनुजा के घर।"

"इस समय रात के बारह बज रह रहे हैं। यह लोगों का सोन का समय है," वह घड़ी में समय देखते हुये बोले।

"जिस औरत का पति कल मरा हो वह कैसे सो सकती है। मुझे अनुजा से मिलने अभी जाना है।"

पंकज ने चुपचाप मेरे हाथ से पर्ची ली जिस पर अनुजा के घर का पता लिखा था। सिटीमेप पर उसके घर की दिशा देखने लगे। मध्य रात्रि की नीरवता ले चीरते हुये हम उसके घर की तरफ चल पड़े।

अनुजा एक घनी आबादी के छोटे से प्लैट में रहती थी। कोई खास फर्नीचर नहीं, कोई वेहतरीन सज्जा-सामग्री नहीं। अति साधारण सामान घर में जुटा था। फिर किसी की मौत के बाद घर कैसा बिखरा-बिखरा हो जाता है वैसा ही लग रहा था। माहौल बहुत भारी था, जबरदस्त अवसाद से भरा हुआ। सहमते हुये मैंने पहले कमरे में कदम रखा। अनुजा कमरे में दुखी व खामोश बैठी थी। वह औरत, जिससे मेरी फोन पर बात हुई थी, उसके साथ थी।

मुझे देखते ही अनुजा मुझसे लिपट कर रो पड़ी। "मुझे किस बात की सजा मिल रही है? मेरी जिन्दगी इतनी खराब क्यों है?" उसके प्रश्नों का मेरे पास कोई जवाब नहीं था। वह बड़ी देर तक सिसकती रही और हम उसे विमूढ़ से ताकते रहे। वह औरत करीब आकर उसे सहलाने लगी थी। काफी देर बाद उसकी सिसकियां थमी तो एक असहज खामोशी छा गई।

"अन्तयेष्टी कब है?" पंकज ने पूछा।

उस औरत ने जवाब दिया, "कल।"

"इंडिया से कोई आ रहा है?" मैंने पूछा। "इतनी दूर से कौन आयेगा?" उस औरत ने निर्लिप्त भाव से जवाब दिया। हमारे बीच फिर एक खामोशी छा गई। अनुजा ने अकाटय मौन धारण किया हुआ था, सिर छाती में धंसाये हुये।

"आप भी हरिद्वार की हो?" उस महिला ने मुझसे पूछा तो खामोशी टूटी।

"हॉ," मैं बोली।

"यह अच्छा है कि इनके अपने शहर का यहॉ कोई है," वह औरत बोली। "आपसे मिल कर इन्हें धीरज मिल रहा है। मैं चाय बना कर लाती हूँ," कहकर वह औरत उठ कर जाने लगी।"

“नहीं,” पंकज और मैंने एक स्वर में अपवाद किया। ऐसे माहौल में हम कैसे चाय पी सकते थे। वह औरत मेरे एकदम करीब आकर फुसफुसाई, “कल से इन्होंने पानी की एक बूंद तक नहीं चखी है। आपके साथ अगर यह चाय पीले तो...।”

उस औरत के आग्रह पर मैं मना नहीं कर सकी। वह औरत रसोई से चाय बना कर ले आयी। अनुजा ने पहले तो न-नुहार किया फिर हमारे आग्रह पर डबडबाते नेत्रों के साथ धीरे-धीरे पूरी चाय गुढ़क ली।

“आपके हाथों से इन्होंने चाय पीली। नहीं कुछ ले ही नहीं रही थी,” वह औरत बोली।

“आपका परिचय?” मैंने उस औरत से पूछा।

“मैं सपना हूँ। अनुजा की सहेली और पड़ौसन भी। जबसे हादसा हुआ है मैं लगातार इन्हीं के पास हूँ। मेरा लड़का अन्दर शुभम और शुभांगी के साथ अन्दर सो रहा है,” वह दूसरे कमरे की तरफ इशारा करते हुये बोली।

मुझे बड़ा इत्मीनान मिला कि अनुजा के साथ कोई है। वह अकेली नहीं है।

जब हम विदा लेने लगे तो अनुजा ने भर्राये स्वर में कहा, “अन्तयेष्टी में आना तुम...। मुझे अच्छा लगेगा, मेरे शहर से बस तुम लोग ही यहॉ हो। इंडिया से तो हमारे लोग इतने जल्दी आ नहीं सकते। वीसा मिलने में ही काफी समय लग जाता है। ” हमने सहमति में गर्दन हिलादी।

दूसरे दिन अन्तयेष्टी पर काफी लोग जमा हो गये थे। समूह में सभी भारतीय थे, सिर्फ एक नवयुवक व नवयुवती को छोड़ कर। वो हाव-भाव में यूरोपयिन व रंग-रूप में भारतीय कम यूरोपियन ज्यादा लगे रहे थे। किसी ने मुझे बताया कि वह दोनों नरेन्द्र मल्हौत्रा की प्रथम पत्नी की सन्ताने हैं। हम थोड़ी उत्सुकता से भर गये। समूह में हमारी निगाहे उन्ही पर टिकी रही। वो ही अन्तयेष्टी की विधि को निभाते हुये दिख रहे थे। मोर्ग (शवगृह) से नरेन्द्र मल्हौत्रा के शव को लेकर वह ही आये। बाकी अन्य औपचारिकताओं का दायित्व भी वो ही निभा रहे थे। अनुजा दुख की प्रतिमूर्ति बनी हुई थी। उसके बच्चे बहुत अबोध थे। हॉ, सपना बड़ी सक्रिय लग रही थी - एक पीड़ित स्थल पर राहत दल की तरह।

अनुजा के इस दुख ने मेरे मन को अत्यन्त संवदित कर दिया। उसके प्रति जो भाव व अनुबन्ध मेरे मन में दबे पड़े थे, एकाएक सतह पर आ गया। आखिर वह मेरी बचपन की सहेली थी। मैंने निर्णय लिया कि मैं अनुजा के इन दुखद क्षणों में जो कुछ भी मदद कर सकती हूँ, अवश्य करूंगी। मैं उसे प्राय: रोज फोन करने लगी। उसके घर उसकी खोज-खबर के लिये जाने लगी। बहरहाल अनुजा के पास ऑसू बहाने का ज्यादा समय नहीं था। नरेन्द्र मल्हौत्रा की आकस्मिक मौत ने काफी समस्यायें उत्पन्न करदी थी। उन्होंने एक जटिल जिन्दगी जी थी तो अपनी मौत के बाद वो काफी पैचिदे मामले छोड़ गये थे। अनुजा उनसे निपटने के लिये सरकारी काार्यालयों के चक्कर काट रही थी। वह जहॉ कहीं भी जाती, सपना उसके साथ होती - एक परछाई की तरह। उसका बेटा भी मुझे हर समय वहीं खेलता हुआ नजर आता।

मुझे अच्छा लगता कि अनुजा के साथ कोई उसकी मदद के लिये है। साथ ही मुझे थोड़ा रंज हो जाता कि मैं उसकी उतनी मदद करने में सक्षम नहीं हूँ जितनी कि सपना है।

खैर सपना उसके पड़ौस में रहती थी। उसका लड़का अनुजा के लड़के की उम्र का होने की वजह से बच्चों के बीच में भी दौस्ती अच्छी थी। फिर सपना की निजी जिन्दगी के विषय में मुझे जो कुछ पता चला उससे मैं यह निष्कर्ष में पहुँची कि वह भी अनुजा की तरह हादसों से गुजर चुकी है।

सपना एक धनाढय जमींदार घराने की थी। उसके पति के काशीपुर में फार्म, टैक्टर व पैट्रोल पंप था। किन्तु उसकी अमीरी ने उसके काफी दुश्मन पैदा कर दिये। परिवार के लोगों के बीच ही कलह हुआ और दिन-दहाड़े उनके घर के बाहर ही किसी ने उसके पति पर गोलियां चला दी। एक युवा सभी के सामने गोलियों से छलनी हो गया। न ही डाक्टर उसे बचा पाये और न ही पुलिस कातिलों को कोई सजा दिला सकी।

सपना का मन अपने देश में अपने लोगों के बीच रहने से घबराने लगा। उसने सारी जमीन जायदाद बेची और अपने देश को हमेशा के लिये अलविदा कहने में बेहतरी समझी। संजोग से डेनमार्क में उसे आश्रय मिल गया। अनुजा का सान्निध्य उसकी किस्मत में बदा था। पिछले दो सालों से वह उसके पड़ौस में किराये के मकान में रह रही थी। अनुजा से उसकी काफी गहरी दौस्ती हो गई थी। फिर नरेन्द्र मल्हौत्रा की मौत ने उन्हें और करीब कर दिया था। कहते हैं कि लोगों के एक से दुख उन्हें आपस में एक कर देते हैं। और जब वो अपने दुख बॉटते हैं तो उनकी तीव्रता कम हो जाती है।

सपना अनुजा के इतने निकट थी कि किसी अन्य के लिये उसके करीब आने की जगह ही नहीं थी। अत: कुछ दिनों के अफसोस, सान्तावना को प्रकट करने व अपनत्व को जताने के उपरांत मेरे व अनुजा के बीच फिर एक दूरी सी आ गई। मगर संबध पूर्णतया विच्छेद नहीं हुआ। हम फोन पर यदा-कदा एक दूसरे से बात कर लिया करते। किसी सभा या महफिल में मिलने पर गर्मजोशी से एक-दूसरे से मिलते। औपचारिक निमन्त्रण में भी हमने एक-दूसरे को अपने घर आमंत्रित किया।

नरेन्द्र मल्हौत्रा के निधन को लगभग छ:-आठ महीने हो गये थे, जब अनुजा का मेरे पास वह फोन आया था। उसका स्वर सामान्य नहीं था, बड़ा उग्र था। “सुधा क्या तुम अभी मेरे पास आ सकती हो?” वह थरथराती आवाज में बोली तो मुझे हैरानी हुई।

“क्यों? क्या हुआ?” मैंने घबराये स्वर में पूछा।

“बस तुम जल्दी से जल्दी यहॉ आ जाओ।”

हैरान, मैंने रिसीवर नीचे रखा। जल्दी से तैयार हुई और अनुजा के घर की तरफ रवाना हो गई, धड़कते हुये दिल से। अनुजा तमाम कागजातों के साथ बिगड़े हुये मूड में बैठी थी, अकेली ही। हमेशा की तरह सपना व उसका लड़का वहॉ नहीं थे। मुझे देखते ही वह चीखने लगी। “बिच है वह...। हमें ठग रही है। हमने उसकी इतनी मदद करी और वह...बिच...फकिन ब्लडी...।”

उसकी जुबान बहुत खराब हो चुकी थी, यह मुझे मालूम था। मगर वह यह गालियां किसके लिये बक रही हैं यह समझने में मुझे कुछ क्षण लगे। “सपना तो तुम्हारी इतनी अच्छी सहेली है,” मैं असमंजस में बोली। “तुम उसे ऐसी गालियां क्यों बक रही हो?”

“हूँ सहेली!” कहते हुये उसके चेहरे पर कुटिल मुस्कान छा गई। “वह मेरी कोई भी नहीं है,” दूसरे ही पल वह चीखी। फिर एक पल ठहर कर फिर शुरू हो गई, “उसकी जान भारत में संकट में थी। हमने उसे यहॉ व्यवस्थित करवाया, और आज नरेन्द्र अचानक मर गया तो वह दुष्ट औरत फायदा उठा रही है। मेरे व मेरे बच्चों का अधिकार मार रही है...ब्लडी, फकिन...।”

“तुमने उसे यहॉ व्यवस्थित करवाया! कैसे?”

अनुजा कोध से इतनी भरी थी कि उसका दिमाग संतुलन से बाहर हो गया था। “नरेन्द्र ने उससे शादी की थी मुझे व मेरे बच्चों को दांव पर रख कर।”

मेरा मुँह हैरानी में खुल गया। “सपना नरेन्द्र मल्हौत्रा की पत्नी ! तो तुम उनकी क्या हो?” विस्मय से मैं बुदबुदाई।

“हमारा तलाक हो गया था,” वह बोली तो खटाक से मेरे दिल में स्पन्दन हुआ। मिसेस लाल के कहे शब्द बरबस मुझे याद आ गये... “नरेन्द्र मल्हौत्रा और अनुजा एक-साथ घूमते फिरते हैं। पति-पत्नी की तरह साथ रहते हैं मगर उनका कागजों पर तलाक हो रखा है...। अनुजा अकेली माता होने का दावा करते हुये यहॉ की सरकार से पैसा ठगती है। और वह खुद दूसरी शादियां रच कर इल्लीगल तरीकों से लोगों को व्यवस्थित करवाता है...।”

मैंने उस समय मिसेज लाल की बातों पर विश्वास नहीं किया। लेकिन अब अनुजा स्वयं ही उगल रही थी।

"मगर तलाक सिर्फ कागजों पर था। सपना से नरेन्द्र की शादी झूठी थी। सौदे के मुताबिक उसे यहॉ का स्थाई आवास का परमिट मिलते ही नरेन्द्र से तलाक लेलेना था। मगर वह अचानक मर गया। वह बिच फायदा उठा रही है। उसे हमें पैसे देने थे लेकिन वह हमारी प्रोपटी को हथिया लेना चाहती है। कागजों पर नरेन्द्र की बीवी वह ही है न..." बकते-बकते अनुजा की ऑखे ऑसुओं से भर गई।

मैं किंकृत्वविमूढ़...। जितना ज्यादा मैं अनुजा के विषय में जान रही थी उतनी अधिक अचभिंत। लोग कैसी-कैसी जिन्दगी जीने लग जाते हैं। हमारे बीच खामोशी छा गई। मुझे कुछ भी समझ नहीं आ रहा था कि मैं उसे क्या कहूँ।

कुछ देर की खामोशी के बाद मैंने उसी से पूछा, "अनुजा मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकती हूँ?"

"तुम मेरी कोई मदद नहीं कर सकती," वह रूखे स्वर में बोली। "तुम सिर्फ मेरी बातों को सुनो। इस शहर में मेरी बातें सुनने वाला कोई नहीं है। यहॉ कोई मेरा मित्र नहीं है।"

एक लंबी उच्छवास भरते हुये मैं इत्मीनान से बैठ गई। "तो सुनाओ अनुजा अपनी बात," मैं उससे बोली।

अनुजा ने शून्य में ताकते हुये कहना शुरू किया, "मैं जब बारहवीं में ही पढ़ती थी तो मम्मी-डेडी की एक साल के अन्दर डैथ हो गई। तीन बड़े भाई थे। मुझे बहुत प्यार तो करते थे लेकिन जब मेरी काफी बड़ी उम्र तक शादी नहीं हो पायी तो मैं उनकी व भाभियों की नजरों में खटकने लगी। उन्होंने एक ऐसे आदमी से मेरी शादी करदी जो तलाकशुदा था और दो बच्चों का बाप था।" अनुजा की ऑखे ऑसुओं से फिर तरबतर हो गई। रूँधे स्वर में बोली, "पता है, सुधा, जब मैं शादी करा कर यहॉ आयी तो उसकी पहली बीवी उसके पीछे पड़ी हुई थी। हम जहॉ जाते थे, वह पीछे पीछे आ जाती थी। अपने बच्चों को भी वह हमारे पीछे लगाये रखती थी। नरेन्द्र को उन बच्चों का खर्चा भी सहना पड़ता था। मेरे लिये उसके पास कुछ नहीं था। यहॉ तक कि साल दो साल में मुझे इंडिया भेजने का खर्चा भी उसके पास नहीं होता था। कहने लगा कि मैं नौकरी करके पैसे कमाऊं। इंडिया की पढ़ाई-लिखाई मेरे यहॉ किसी काम नहीं आयी। ढंग का जॉब मुझे नहीं मिल सका। मजबूरन मैंने एक होटल में सफाई का काम पकड़ लिया।"

"ईमानदारी से किया कोई भी काम बुरा नहीं है अनुजा," मैं तुरन्त बोली।

"नहीं, सफाई का काम सफाई का ही है चाहे कितने ही आधुनिक उपकारणों का इस्तमाल किया जाये। बाइस कमरों, टॉयलेट, गलियारों वगैरह को साफ करते हुये मेरी आफत आ जाती थी। मैंने वह काम छोड़ दिया और नरेन्द्र की उसके कामों में मदद करने लगी। उसके साथ मेरी जिन्दगी का कोई भी दिन अच्छा नहीं बीता।"

अनुजा सब बकती जा रही थी और मैं सोचती जा रही थी कि यहॉ की सरकार विदेशियों के प्रति जो कड़ा सा कड़ा रूख अपना रही है, वह गलत नहीं है। लोग अपने मुल्कों से यहॉ आकर यहॉ की सुविधाओं का गलत लाभ उठाते हैं। असंवेधानिक, शर्मनाक कामों को करने से हिचकते नहीं हैं।

"तुमने यह सब क्यों किया, अनुजा? अपने पति को अपने अनुसार ढालने के बजाये तुम उसके अनुरूप क्यों ढली?"

अनुजा के पास मेरे प्रश्नों का कोई जवाब नहीं था। वह थकी सी घुटनों पर अपना सिर टिकाये बैठ गई। एकाएक मुझे कुछ सूझा। मैंने उसके बच्चों को आवाज लगाई, "शुभम और शुभांगी..."

दोनों बच्चे अपनी मॉ के विकराल रूप को देख कर दूसरे कमरे में दुपके पड़े थे। मेरे आवाज लगाने से दरवाजे की ओट से वो मुझे व अनुजा को टुकुर-टुकुर निहारने लगे। "देखों अनुजा," मैं उससे सधे शब्दों में बोली, "तुम्हें एक काफी लंबी मंजिल तय करनी है। अपने अबोध बच्चों को पाल-पौस कर बड़ा करना है। बहुत बड़ी जिम्मेदारी है तुम पर। अपने मासूम बच्चों को वह सब दो जो उनका पिता उन्हें देने में असमर्थ था। एक सरल, निष्कपट जिन्दगी...।"

अनुजा का मौन उसकी सहमति व्यक्त कर रहा था। "शुभम और शुभांगी..." मैंने फिर आवाज लगाई और कस कर।

दोनों बच्चे दरवाजे की ओट से बाहर निकल आये। "अपनी मॉ के मूड को ठीक करो," मैं उनसे बोली तो वो हिचक कर अनुजा को ताकने लगे। अनुजा ने हल्की हंसी हंसते हुये अपनी बॉहे फैलाई तो बच्चे लपक कर उसकी गोदी में चढ़ गये। मैं मंत्रमुग्ध उन तीनों को आपस में एक-दूसरे को दुलारते हुये देखने लगी।

दुख ने अनुजा का जिन्दगी के प्रति नजरिया बदल दिया था। नरेन्द्र मल्हौत्रा की मौत के बाद उसके आचार-विचार में एक सलज्जता व शालीनता व्याप्त हो गई थी। जिन्दगी को एक दिशा देने के लिये अगर वह अकेली थी तो स्वतंत्र भी थी। उसने अपने बच्चे सरकारी स्कूल से निकाल कर प्रतिष्ठित प्राइवेट स्कूल में डाल दिये थे। धन को व्यय करने की उसकी प्राथमिकतायें जो बदल गई थी। इन सबके साथ उसकी व्यस्तता अत्यधिक बढ़ गई थी। यूनियन से बेरोजगारी भत्ता लेने के बजाये अब वह एक नियमित नौकरी कर रही थी। बहुत बड़ा पद तो नहीं लेकिन मैहनत व ईमानदारी से कमाने वाली नौकरी थी। दुनिया किसी की हरकतों का बहुत जल्दी ही उचित सिला दे देती है। मैंने देखा कि जहॉ लोग पहले अनुजा से घनिष्ठता करने से कतराते थे अब सब उसकी मित्रों की श्रेणी में थे। भारतीय समुदाय के प्रतिस्थित लोगों के साथ उसका उठना-बैठना हो गया था। उसे लोग एक आदर के भाव से देखने लगे थे। सभी भारतीय जल्सों में उसे ससम्मान आमंत्रित किया जाता। उसने समाज में यह प्रतिष्ठा स्वयं अर्जित की थी, अपने बल-बूते पर। समय तो अपनी रफ्तार से गुजरता ही है। तीन साल में ही उसके नन्ने-मुन्ने बच्चे अपनी बाल्यावस्था पार कर आकर्षक छवि वाले किशोर हो गये। उस दिन बड़े दिन हो गये थे उससे बात किये हुये। सो मैंने उसका हाल-चाल पूछने के लिये फोन किया, “कैसी कट रही है?”

“कुछ सोचने का समय नहीं है,” वह हंसते हुये बोली। “अभी-अभी ऑफिस से लौटी हूँ। शुभम को बाजार भेजा है दूध, ब्रेड व बटर खरीदारी के लिये और शुंभागी मेरे लिये चाय बना रही है। आ जाओ पीने के लिये...।”

अर्चना पैन्यूली
Bryggergade 6,2,4
2100 Copenhagen Ø
DENMARK
Email: archana@webspeed.dk